“डायस्पोरस या डायस्प्रोवेस अर्थात् आप्रवासन”? इन्हें मातृभूमि का गौरव या कलंक कहना काफ़ी नहीं है
“Dias-porous” or “Dias-prowess”? Pronouncing Them as Pride or Prejudice of the Motherland is Not Enough

बिनोद खडरिया
Binod Khadria
October 10, 2011

विदेशों में बसे “देशद्रोही” और “देवदूत”

हाल ही में पिछले दशक में भारतीय प्रवासियों पर उच्चस्तरीय समिति की रिपोर्ट (ICWA 2001) आने के बाद से और भारतीय नीति के परिप्रेक्ष्य में मील का पत्थर साबित होने वाले हाल ही के कुछ संक्रमणों के साथ भारत सरकार दुनिया-भर में फैले अनिवासी भारतीयों (NRIs) और भारतीय मूल के अत्यंत कुशल भारतीय प्रवासियों को अपनी पहुँच के भीतर लाने का प्रयास कर रही है. नेहरू-इंदिरा युग की अतीत की उदासीनता को तोड़ने की कोशिश में यह सरकार उन्हें प्रतीकात्मक रूप में ‘‘देशद्रोही’’ न कहकर मातृभूमि के नये खोजे गए ‘‘देवदूत’’ के रूप में देखने का प्रयास कर रही है. 21 वीं सदी में प्रतिभा पलायन के नकारात्मक स्वरूप की जगह उन्हें प्रतिभा लाभ जैसा सकारात्मक स्वरूप प्रदान किया जा रहा है. खास तौर पर भविष्य के संदर्भ में जब भारत को ‘‘उदीयमान दक्षिणी अर्थव्यवस्था’’ (RSEs) के नेतृत्व के लिए पेश किया जा रहा है तो इस संभावना को अमलीजामा पहनाने के लिए वैश्विक आप्रवास के व्यवस्थापन के क्षेत्र में मात्र प्रवासियों को साथ लेकर चलना ही काफ़ी नहीं होगा, बल्कि हमें उससे आगे बढ़कर बहुत कुछ करना होगा?

भारतीय आप्रवासन में नया मोड़

21 वीं सदी में, जैसा कि आज की प्रवृत्तियों से झलकता है, यह अनुमान लगाया गया है कि वैश्विक आप्रवासन के प्रवाह की दिशा का निर्धारण मानव पूँजी की वैश्विक माँग से ही होगा; विकसित देशों में चौवन मिलियन कामगारों की अतिरिक्त माँग होगी, जिसे अमरीकी जनगणना ब्यूरो BCG 2002-2003 के अनुसार मोटे तौर पर भारत के सैंतालीस मिलियन कामगारों की अनुमानित अधिशेष सप्लाई से ही पूरा किया जा सकेगा. इन उम्मीदों के पीछे जो उत्साह है, उसका कारण यही है कि भारतीय प्रवासियों द्वारा जो पैसा भारत को भेजा जाता है, उसमें वृद्धि हो रही है और / या जब वे घर लौटते हैं तो उनके पास उच्च स्तर का कौशल और निवेश करने के लिए भारी बचत का खजाना होता है, जिससे एक ही छलाँग में ‘‘महाशक्ति’’ बनने का भारत का सपना साकार हो सकता है. लेकिन दो ऐसी अदृश्य चेतावनियाँ हैं, जिनके कारण भविष्य में इनकी संभावना धूमिल होती सी लगती है.

पहली चेतावनी तो यह है और इस तथ्य की अक्सर उपेक्षा कर दी जाती है कि विदेशों में बसे भावी भारतीय प्रवासियों द्वारा अभी हाल ही में विदेशी भारतीय छात्र अध्ययन निधि के रूप में विकसित देशों की ओर संभावित ‘‘ धन प्रेषण के चुपचाप समुद्री तरंग की तरह वापस आने’’ की प्रवृत्ति के कारण इसके प्रवाह में रुकावट आने की संभावना है. एसोसिएटेड चैम्बर ऑफ़ कॉमर्स (Assocham) ऑफ़ इंडिया के ताज़ा आंकड़ों के अनुसार धनप्रेषण का यह प्रवाह $7.5 बिलियन डॉलर से $10 बिलियन डॉलर तक हो सकता है, जो भारत को भेजे जाने वाले वैश्विक धन प्रेषण का औसतन छठा भाग होगा.

दूसरी चेतावनी यह है कि कदाचित् हमारे स्मृतिपटल पर अभी भी ताज़ा है कि इस सदी के अंत में जब पिछली अमरीकी मंदी के दौरान आईटी का गुब्बारा फूटा था तो बीपीओ के उदय के कारण भारतीयों की वापसी का ताँता बँध गया था. बहुत कम लोगों को यह पता है कि जो लोग स्वदेश वापस लौटे थे वे सर्वश्रेष्ठ डिग्रीधारी आईटी पेशेवर न होकर दूसरी पंक्ति के आईटी पेशेवर थे और इनमें से अधिकांश लोग भी स्वेच्छा से भारत नहीं लौट रहे थे, बल्कि मंदी की मार से ग्रस्त अमरीकी अर्थव्यवस्था के कारण नौकरी के ठेके का नवीयन न होने के कारण विवश होकर लौट रहे थे.

प्रवासियों की वापसी में हितों का अदृश्य टकराव

प्रवासियों की स्वदेश वापसी के अपने भी कई निहितार्थ हैं. यद्यपि गंतव्य देश के श्रम बाज़ार में प्रवासियों की संख्या कुछ प्रवासियों की घर वापसी के बावजूद बढ़ती रह सकती है और व्यक्तिगत स्तर पर उनके चेहरे बदलते रह सकते हैं, फिर भी गंतव्य समाज में जातीय संघर्ष का तत्व कम बने रहने की संभावना हो सकती है. प्रवासियों (या ''आप्रवासियों के आवागमन'', जिसे कि आजकल प्रोत्साहित किया जा रहा है) की वापसी की स्पष्ट घोषित नीति के कारण,जिसमें विदेशियों के केवल अस्थायी निवास के अधिकार ही शामिल हैं, अनेक देशी नागरिकों के मन में आर्थिक दृष्टि से प्रतियोगिता से बाहर हो जाने का डर निकल जाता है, इसलिए स्वाभाविक रूप में ही संघर्ष की आशंका से ग्रस्त गंतव्य देश आगे बढ़कर प्रवासियों की वापसी और उनके आवागमन को बढ़ावा देते हैं.

दूसरी ओर अस्थायी आप्रवास के सामाजिक निहितार्थ, जिनमें आप्रवासियों और उनके परिवार जनों की अपने मूल देश में वापसी के नीतिगत प्रचार या ''प्रवासियों के आवागमन'' की बात निहित है,प्रवासियों के संसाधनों के रिसाव को रोकने के लिए उनके हितों में बाधक सिद्ध हो सकते हैं. उदाहरण के लिए, किसी प्रवासी द्वारा व्यक्तिगत स्तर पर घर लौटने के निर्णय में यह भी निहित है कि पहले वह स्वयं अपना ही उत्प्रवास चाहता है या चाहती है या अपनी पत्नी या अपने पति और बच्चों को भी अपने साथ ले जाना चाहता या चाहती हैः जब काम पर अनुपस्थिति की छुट्टी विदेश में उसकी पत्नी / पति के काम के अनुरूप न हो तो क्या उसे त्यागपत्र दे देना चाहिए? मूल देश में स्कूल में प्रवेश / पुनर्प्रवेश की कठिनाई को देखते हुए क्या बच्चों का स्कूल छुड़वाना ठीक होगा? मोटे तौर पर आप्रवासियों के लिए अंतर्राष्ट्रीय पद को स्वीकार करने में सबसे बड़ी बाधा पारिवारिक होती है (62 प्रतिशत), उसके बाद भाषा की (13 प्रतिशत), मूल देश में वापसी की समस्याओं (8 प्रतिशत) की, सुरक्षा (5 प्रतिशत) की,लागत (5 प्रतिशत) की और जीवन स्तर (4 प्रतिशत) की.

आप्रवासन और प्रवासन के भावी संचालक

ज़ाहिर है कि मूल देश के प्रवासी न तो ''डायस्पोरस'' होते हैं और न ही ''डायस्प्रोवेस'' अर्थात् वे अपनी मातृभूमि के न केवल गौरव होते हैं और न ही कलंक, बल्कि वे मैक्रो स्तर पर उत्प्रवास या भारत में वापसी के सच्चे संचालक होंगे. इसके बजाय पारदेशीय श्रम बाज़ार के गंतव्य स्थल पर वे ऐसे दीर्घकालीन रणनीतिक कारक हैं, जो उनका निर्धारण करेंगे. इन सामान्य रणनीतियों को तीन याद रखने लायक लयबद्ध शब्दों में वर्गीकृत किया जा सकता हैः *एज, वेज* और *विंटेज* अर्थात् *आयु, मज़दूरी* और *विंटेज.*

एज अर्थात् आयु ''आयु के संरचनागत परिवर्तन'' के दुष्प्रभावों को निष्प्रभावी बनाने का काम करती है, जिसे वापस लौटे हुए प्रवासियों के उन युवा साथियों के ज़रिए संपन्न किया जा सकता है, जो दूसरी या तीसरी बार

आप्रवास कर रहे होते हैं. बड़ी आयु के वापस लौटे हुए प्रवासी अपने मूल देश में ही बस जाना चाहते हैं और पुराने कामगारों के झुंड के साथ जुड़ जाना चाहते हैं. दूसरी रणनीति है वेज अर्थात् मज़दूरी की, जिसका अर्थ है तुलनात्मक लागत का लाभ, जिसे मूल देश ने वैश्विक व्यापार करते हुए तब खो दिया था जब दुबारा वापस लौटे हुए युवा प्रवासी अपनी कम मज़दूरी,भत्तों और पेंशन के सामाजिक लाभ को साथ लेकर गंतव्य देशों में गए थे और वापस लौटे हुए बड़ी आयु के प्रवासी उत्पादन की लागत में उसे जोड़ देते हैं और इस प्रकार यह लागत उनके द्वारा उत्पादित माल और सेवाओं में जुड़ जाती है. इसके अलावा यह लागत परोक्ष रूप में मज़दूरी, भत्तों और पेंशन को कम करके भारत के बाहर प्रेषित धन के प्रवाह को शांत रूप में तरंगित होकर वापस लौट आती है, जिससे प्रवासी की धन-प्रेषण क्षमता का निर्धारण होता है. तीसरा रणनीतिक निर्धारक है, विंटेज, जिसका अर्थ है युवा छात्र प्रवासी पीढ़ी की अधुनातन तकनीकी जानकारी व कौशल और नवीनतन पाठ्यक्रम तक उसकी पहुँच. इससे उनकी पढ़ाई पूरी होने और पेशेवर बनने से पहले ही यह अनुमान लगाया जा सकता है और इससे यह तथ्य सामने आता है जिसे ''अर्ध-निर्मित'' मानव पूँजी का ''पूर्व-प्रवासन'' कहा जा सकता है. .

विश्व को नेतृत्व प्रदान करने के लिए नया भारतीय परिप्रेक्ष्य

आप्रवास-नीति के परिवर्तन की अस्थिरता और आप्रवासियों को सँभालने के लिए कॉन्सुलर परिपाटियों में अनौपचारिक विचलन का मनमानापन- दो ऐसे तत्व हैं, जो नीतिगत प्रवृत्तियों को रूपायित करने और द्विपक्षीय और बहुपक्षीय हस्तक्षेप के लिए आवश्यक आप्रवासन को शासित करने के लिए महत्वपूर्ण होते हुए भी उपेक्षित क्षेत्र हैं. जब भी बहुपक्षीय वार्ताएँ शुरू होती हैं, जिनमें दोनों ही देशों के नीति-निर्माता और बुद्धिजीवी एक साथ खड़े होकर अन्य देशों के निर्णयों की पैरवी करके या नैतिक दबाव डालकर प्रभावित कर सकते हैं, उस समय दुर्भाग्यवश यह एक ऐसा क्षेत्र बन जाता है, जिसे दो देश ''अपरक्राम्य प्रभुतासंपन्न क्षेत्र'' मानते हैं. इन परिस्थितियों में यह सवाल उठता है कि क्या भारत, जिसे दुनिया आरएससी के रूप में निहार रही है और जिसमें आप्रवासियों का विकासशील स्रोत देश होने के नाते संभावित महाशक्ति के रूप में संक्रमित होने की संभावना है,विकसित देशों को यह दिखाना आरंभ कर सकता है कि आप्रवासन की नीतियों और परिपाटियों को किस प्रकार प्रवासी-केंद्रिक बनाया जा सकता है. इस प्रकार से भारत के वैश्विक नेतृत्व ग्रहण करने का संकेत इस बात से मिल सकता है कि भारत ने अपने प्रवासियों के प्रति अतीत की अपनी उदासीनता को जिस तरह से खत्म किया है और अब उनके प्रति प्रत्यक्ष रूप में सकारात्मक रूख अपना रहा है और अब एक और बड़ा कदम उठाकर विश्व में सुरक्षाः आप्रवासन-केंद्रिक नीतियों और परिपाटियों के नाम पर आगे बढ़ने वाले विश्व में आप्रवासन की नीतियों के उदारीकरण के समर्थन में अब तक जिसका वह प्रचार करता रहा है,अब उन भावी प्रवासियों के लिए जो अनिवार्यतः विदेशों में स्थित भारतीय कॉन्सुलेट में भारत का वीज़ा लेने के लिए आते हैं और फिर मैत्री भाव से भारत के अंदर भारतीय आप्रवासन के उन चैक पोस्टों के संपर्क में रहते हैं, जहाँ से वे सबसे पहले इस देश में आए थे, उन पर आचरण भी कर रहा है. यह महाशक्ति के रूप में वैश्विक रूप में उभरने वाले भारत की वास्तविक पहचान होगी और भारतीय प्रवासियों की सीमित ''शक्ति'' से कहीं आगे बढ़कर उन्हें विश्व नागरिक के रूप में पहचान देने वाला कदम सिद्ध होगा और इसी प्रक्रिया में उन तमाम देशों के लिए जो अंधकार में डूबने के कारण विश्व की बिरादरी से बाहर होकर अपनी पहचान खोते जा रहे हैं, प्रकाश पुंज के रूप में उभर रहा है. दुर्भाग्यवश, भारत की वीज़ा नीति की नवीनतम प्रवृत्ति से ऐसा लगने लगा है कि भारत भी अपनी पहचान बनाने के बजाय अन्य देशों की भीड़ में खोता जा रहा है.

*बिनोद खडरिया जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली में अर्थशास्त्र और शिक्षाशास्त्र के प्रोफ़ेसर हैं. उनके प्रकाशनों में शामिल है, ''*द माइग्रेशन ऑफ़ नॉलेज वर्कर्स (सेज, 1999)*'', जिसके लिए उन्होंने सन् 1995 में भारत और अमरीका में विस्तृत फ़ील्ड वर्क किया है. उन्होंने आरंभिक* भारत आप्रवास रिपोर्ट 2009: अतीत, वर्तमान और भविष्य का दृष्टिकोण और उसकी अगली श्रृंखला भारत आप्रवास रिपोर्ट, 2010-2011 का लोकर्पण किया हैः द अमेरिकाज़ *प्रेस में है (सीयूपी).*

हिंदी अनुवादः विजय कुमार मल्होत्रा, पूर्व निदेशक (राजभाषा), रेल मंत्रालय, भारत सरकार
<malhotravk@hotmail.com>